समाज विकासमाला

हमारे मुस्लिम संत

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

समाज-विकास-माला : ८९

हमारे मुस्लिम संत

मुसलमान संतों के सीख देनेवाले प्रसंग

संग्राहिका
आदर्शकुमारी

संपादक
यशपाल जैन

१९५७
सस्ता साहित्य मंडल-प्रकाशन

समाज-विकास-माला

हमारे देश के सामने आज सबसे बड़ी समस्या करोड़ों आदमियों की शिक्षा की है। इस दिशा में सरकार की ओर से यदि कुछ कोशिश हो रही है तो वही काफी नहीं है। यह बड़ा काम सबकी सहायता के बिना पार नहीं पड़ सकेगा।

बालकों तथा प्रौढ़ों की पढ़ाई की तरफ जबसे ध्यान गया है, ऐसी किताबों की मांग बढ़ गई है, जो बहुत ही आसान हों, जिनके विषय रोचक हों, जिनकी भाषा मुहावरेदार और बोलचाल की हो और जो मोटे टाइप में बढ़िया छपी हों।

यह पुस्तक-माला इन्हीं बातों को सामने रखकर निकाली गई है। इसमें कई पुस्तकें निकल चुकी हैं। इन सबकी भाषा बड़ी आसान है। विषयों का चुनाव बड़ी सावधानी से किया गया है। छपाई-सफाई के बारे में भी विशेष ध्यान रखा गया है। हर किताब में चित्र भी देने की कोशिश की है।

यदि पुस्तकों की भाषा, शैली, विषय और छपाई में किसी सुधार की गुंजाइश मालूम हो, तो उसकी सूचना निस्संकोच देने की कृपा करें।

—मंत्री

पाठकों से

संतों के चरित बड़े ही शिक्षा देनेवाले होते हैं। उन्हें पढ़कर अपनी बुराइयों को देखने और दूर करने की प्रेरणा मिलती है। संतों की जात नहीं होती। वे सबके होते हैं और उनकी सिखावन सबके लिए लाभ की होती है।

इस पुस्तक में कुछ संतों के जीवन-प्रसंग दिये गए हैं। ये संत मुसलमान घरों में पैदा हुए थे, लेकिन पाठक देखेंगे कि उनकी जीवनियां सबको फायदा पहुंचानेवाली हैं।

श्री श्रीगोपालजी नेवटिया ने एक बड़ी किताब लिखी है। उसका नाम है 'मुस्लिम संतों के चरित'। उसीमें से संग्राहिका ने यह सामग्री ली है। भाषा उन्होंने कहीं-कहीं सरल कर दी है और कुछ प्रसंग छोड़ दिये हैं।

—संपादक

हमारे मुस्लिम संत

: १ :

जाफ़र सादिक़

तपस्वी जाफ़र ऊंचे दर्जे के संत थे। लोगों की उनमें बड़ी श्रद्धा थी, कुरान के गूढ़ तत्व को समझने और समझाने में वह अपने ढंग के एक ही थे।

उसी समय में अरब का खलीफ़ा मंसूर था। जाफ़र का नाम चारों ओर फैला तो मंसूर को बड़ी डाह हुई और उसने उन्हें मारने के लिए पकड़वाकर मंगवाया। मंत्रियों ने खलीफ़ा को बहुतेरा समझाया कि ऐसे त्यागी-तपस्वी महात्मा पर हाथ उठाना पाप होगा, लेकिन मंसूर न माना। खलीफ़ा ने आज्ञा दी कि सादिक़ के आने पर मैं अपना मुकुट उतारूंगा, उसी समय उनका सिर उड़ा दिया जाय।

तपस्वी सादिक़ आये। मंसूर ने उनका आदर के साथ स्वागत किया। उन्हें ऊंचे आसन पर बैठाया। स्वयं बड़ी नम्रता से उनके सामने बैठा। सादिक़ का सिर काटनेवाले यह देखकर चकित थे कि आखिर खलीफ़ा इतना कैसे बदल गया। खलीफ़ा ने उनसे पूछा, "मैं आपकी क्या सेवा करूं ?"

सादिक़ बोले, "बस यही कि आगे फिर कभी मुझे बुलाकर मेरी तपस्या में खलल न डालना।"

खलीफा ने उनकी बात मान ली और आदर से उनको विदा किया।

... ...

सादिक़ बहुत ही नम्र स्वभाव के थे। एक बार तपस्वी दाऊद ने उनसे कहा, "मेरा दिल बुरी-बुरी बातों के उठने से मलिन हो रहा है। कृपा करके मुझे उपदेश दीजिए।"

सादिक़ ने कहा, "आप-जैसे बैरागी को मैं उपदेश दूं? मुझे तो खुद बड़ी फिक्र है कि कयामत के दिन हजरत मुहम्मदसाहब मेरी ओर इशारा करके कहेंगे कि तू मेरे रास्ते पर क्यों नहीं चला। किसी खान्दान में पैदा होने से कोई उपदेशक थोड़ा बन जाता है। उसके लिए चाहिए सदाचार।"

यह सुनकर दाऊद की आंखों में आंसू भर आये। बोले, "खुद पैगम्बर साहब के खान्दान के होते हुए भी जब ये तपस्वी अभिमान से इतने रहित हैं तब मेरा-जैसा छोटा प्राणी अपने आचरण पर क्या घमंड करे!"

... ...

एक आदमी के रुपयों की थैली चोरी हो गई। उसने गलती से चोर समझकर सादिक़ को पकड़ लिया। सादिक़ ने पूछा, "तुम्हारी थैली में कितने रुपये थे?"

उसने बताया—एक हजार।

सादिक़ ने उसे अपने पास से रुपये दे दिये। कुछ समय बाद असली चोर पकड़ा गया। वह आदमी सादिक़ के रुपये लौटाने के लिए दौड़ा आया। सादिक़ ने उससे कहा, "मैं दी हुई चीज वापस नहीं ले सकता।"

"मैं दी हुई चीज वापस नहीं ले सकता।"

इसपर वह आदमी अपनी करनी पर पछताया।

... ...

एक दिन एक आदमी ने आकर सादिक़ से कहा—"मैं ईश्वर का दर्शन करना चाहता हूं।"

सादिक़ ने जवाब दिया, "क्या तुम भूल गये कि ईश्वर ने कहा है—मैं दिखाई नहीं पड़ूंगा?"

बहुत समझाने पर भी जब वह आदमी नहीं माना

तो सादिक़ ने उसके हाथ-पांव बंधवाकर नदी में डलवा दिया। थोड़ी देर पानी में रखने के बाद उसे निकलवाया। उस आदमी ने सोचा कि यह कैसा महात्मा है। जरा दलील करने पर ही ऐसी सजा देता है। डर के मारे वह गिड़गिड़ाने लगा, लेकिन सादिक़ ने फिर उसे पानी में डलवा दिया। थोड़ी देर बाद निकलवाने पर वह माफी मांगने लगा। सादिक़ फिर भी नहीं माने। आखिरी बार उन्होंने उसे बहुत ही गहरे पानी में डलवा दिया। बेचारा जीवन से निराश हो गया। उस समय उसे एक सहारा सूझा और वह था ईश्वर का। वह भगवान का नाम लेकर प्रार्थना करने लगा। सादिक़ नें तब उसे बाहर निकलवाकर पूछा, "क्यों, ईश्वर को देखा ?"

उस आदमी ने जवाब दिया, "जबतक मैंने दूसरे का सहारा ले रखा था, तबतक बीच में एक पर्दा था, लेकिन जब मैं एक उसीका सहारा मानकर उसकी शरण में गया और उसके लिए व्याकुल होगया तब मेरे हृदय का द्वार खुल गया और मुझे अपने अंतर में ईश्वर के दर्शन हुए। मन की अशांति दूर हो गई।"

सादिक़ ने कहा, "ठीक है, जबतक तुम मुझे पुकारते थे, झूठे रास्ते पर थे। अब तुम्हारे दिल के दरवाजे खुल गये हैं। अब इस बात की सावधानी रखना कि ये बंद न होने पावें। आदमी को और सब सहारे

छोड़कर ईश्वर का सहारा लेना चाहिए।

: २ :

अबुल अब्बास नहाओन्दी

तपस्वी अबुल अब्बास बड़े ज्ञानी और बैरागी थे। उन्होंने कहा है कि अपनी साधना के शुरू के बारह साल तक मैं सिर झुकाये रहता। इससे मुझे बहुत-कुछ तत्वज्ञान मिला। कई लोग ईश्वर-दर्शन—ईश्वर को अपना बनाने की इच्छा रखते हैं, लेकिन मेरी तो यही इच्छा थी कि ईश्वर मुझे ऐसे थोड़े-से क्षण तो दे, जब मैं परमात्म-दर्शन कर सकूं, यानी यह जान सकूं कि मैं कौन हूं, कैसा हूं और कहां हूं ?

अब्बास टोपी सींकर अपना पेट भरते थे। वह एक टोपी की मेहनत के दो पैसे लेते, जिनमें से एक पैसा भिखारी को दे देते और दूसरा पैसा खाकर पूरा करने पर ही नई टोपी का काम हाथ में लेते थे।

अब्बास का एक शिष्य था, बहुत पैसेवाला। अपने धन में से कुछ हिस्सा वह अलग करता जाता। उस हिस्से को किसे दान दे ? इस बारे में उसने अब्बास से पूछा। उन्होंने कहा, "अच्छे पात्र को देना चाहिए।"

अब्बास के यहां से लौटते ही रास्ते में उस शिष्य को एक अंधा मिला। उसे ठीक आदमी समझकर उसने एक सोने की मुद्रा उसे दे दी।

दूसरे ही दिन उसने सुना, वह अंधा किसी दूसरे अंधे से कह रहा था—कल एक आदमी मुझे एक मोहर दे गया। मैंने उससे खूब शराब पी और मौज की।

यह सुनकर उस धनी आदमी को बड़ा दुख हुआ। उसने यह बात अब्बास को सुनाई। अब्बास ने एक पैसा उसके हाथ में देकर कहा, "जाओ, सबसे पहले जो आदमी मिले, उसीको यह पैसा दे दो।"

कहने की जरूरत नहीं कि यह पैसा अब्बास को टोपी बेचकर मिला था।

धनी शिष्य ने पहले आदमी के मिलते ही वह पैसा दे दिया और यह देखने के लिए कि वह क्या करता है, उसके पीछे हो लिया। उस आदमी ने एक निर्जन जगह में जाकर अपनी झोली खोली और उसमें से एक मरे हुए पक्षी को निकालकर बाहर फैंक दिया। यह देखकर वह धनिक आगे बढ़ा और उससे पूछा कि क्यों भाई, तुमने यह क्या किया? वह बोला, "मेरे घर के लोग सात दिन से भूखे थे। भीख मांगना मुझे पसंद नहीं। लाचार होकर भूख मिटाने के लिए मैंने यह मरा हुआ पक्षी उठा लिया था। आपने मुझे एक पैसा दे दिया। अब मुझे इस पक्षी की जरूरत ही नहीं रह गई।

धनी ने लौटकर यह बात अब्बास को सुनाई। अब्बास ने कहा, "तुमने अपना धन अवश्य ही अत्याचारियों और दुराचारियों की मदद से पाया होगा। इसीलिए तुम्हारे

धन के दान का यह नतीजा निकला। न्याय से मिले हुए मेरे एक पैसे ने एक गरीब आदमी को निषिद्ध भोजन से बचा लिया, इसमें नई बात क्या है !"

... ...

एक दिन ईश्वर को न माननेवाला एक आदमी एक दूसरे तपस्वी की झोंपड़ी में गया। वह बड़े तेज स्वभाव के थे। देखते ही पहचान गये। बोले, "अरे, तू यहां कैसे ?"

उस आदमी ने समझ लिया कि वहां उसकी दाल नहीं गलने की। सो वह अब्बास के पास पहुंचा। अब्बास ने उसे पहचान लिया, पर वह कुछ भी बोले नहीं। वह वहां चार महीने तक रहा। धोखा देने के लिए वह रोज सबके साथ नमाज पढ़ता। एक दिन अब्बास ने उससे कहा, "आपका यहां के अन्न-जल के साथ संबंध हो गया है। अब आप यहां से मेरे प्रति विरोध का भाव लेकर जायं तो ठीक नहीं होगा।"

उस दिन से उस आदमी का ईश्वर पर विश्वास हो गया और वह अब्बास की संगति में रहकर साधना करने लगा। आगे चलकर वह एक सिद्ध-पुरुष हुआ और जब अब्बास का देहांत हुआ तो उसने उनकी जगह ली।

: ३ :

अबु उस्मान हयरी

अबु उस्मान हयरी खुराशान के रहनेवाले थे। उनका घराना बड़े ऊंचे दर्जे का था। खुशशान में उन्होंने धर्म का प्रचार किया और एक जगह उपदेश-पीठ की स्थापना की, जहां वह धर्म के बारे में चर्चा किया करते थे। एक जगह उन्होंने कहा है—"बचपन से ही मेरा हृदय ज्ञान प्राप्त करने के लिए उत्सुक था। संसार-प्रेमी लोगों का समागम मुझे रुचता नहीं था। मेरे मन में यही विचार उठता रहता था कि ये लोग जिन चीज़ों को पाने के लिए परेशान हो रहे हैं उनसे भी ज़्यादा महत्व की कोई चीज़ होनी चाहिए। आगे चलकर मुझे मालूम हुआ कि वह चीज है—धर्म।"

बचपन में एक बार वह मदरसा जा रहे थे। कीमती कपड़े पहने थे, साथ में तीन-चार नौकर थे। रास्ते में उन्हें एक गधा दिखाई दिया। उसकी पीठ पर एक बड़ा-सा घाव था और कौए उसमें चोंच मार रहे थे। उन्हें बड़ी दया आई। उन्होंने अपनी पगड़ी उतारकर उसके घाव पर पट्टी बंधवा दी और अपना कीमती शाल उसे ओढ़ा दिया।

... ...

एक दिन एक धर्म-द्रोही ने उस्मान को अपने

अपनी पगड़ी उतार कर घाव पर बांधने के लिए दे दी

यहां भोजन करने को बुलाया। उस्मान ठीक समय पर उसके घर पहुंच गये। उन्हें देखकर वह बोला, "बेवकूफ कहीं का! यहां अपने बाप की धन-दौलत रख गया था क्या, जो दौड़ा-दौड़ा खाने चला आया, जा भाग यहां से।"

उस्मान बिना कुछ कहे-सुने लौट पड़े। कुछ ही कदम गये होंगे कि उस आदमी ने उन्हें आवाज दी। वह लौटे। वह बोला, "खाने का लालच है, तो ले यह पत्थर खा।"

उस्मान चुप रहे और फिर लौट गये। उस आदमी ने उन्हें फिर बुलाया और हैरान किया। इस प्रकार तीन बार उसने उन्हें बुलाया। फिर भी उनके चेहरे

पर शिकन तक न आई। आखिर उस आदमी की आंखें खुल गईं और वह उस्मान के पैरों पर गिरकर रोने लगा। उसने उनके धीरज और सहनशीलता की सराहना की, तो वह बोले, "भाई, इसमें कौन बड़ी बात है! कुत्ते का भी तो यही स्वभाव होता है। दुतकारे जाने पर भी ज़रा से बुलावे पर वह पूंछ हिलाता चला आता है। उसे न ख़ुशी होती है न दुःख। मैंने तो कुत्ते का-सा काम किया है। इसमें प्रशंसा की क्या बात है?"

... ...

एक दिन रास्ते में जाते समय इनके सिर पर किसी आदमी ने कोयले की टोकरी उंडेल दी। उस्मान के साथी इकट्ठे होकर उस आदमी को बुरा-भला कहने लगे। उस्मान ने कहा, "भाइयो, इस काम के लिए तो इस आदमी को धन्यवाद देना चाहिए। जिसके सिर पर धधकती आग की वर्षा होनी चाहिए थी, उसपर इसने ठंडे कोयले ही फेंके। यह तो इसका महान् उपकार है।"

... ...

एक दिन एक दुराचारी लड़का हाथ में बाजा लेकर मतवाले की तरह झूमता रास्ते में चला आ रहा था, अचानक उस्मान से उसकी मुलाकात हुई। लड़का शर्मिंदा होकर अपना बाजा लेकर कपड़ों में और बाल टोपी में छुपाने लगा। वह डरा कि कहीं तपस्वी उस्मान उसकी असलीयत को जान न जायं। उस्मान

ने जब यह देखा तो बड़े प्यार से बोले, "भाई, डरो मत। हम सब एक-से हैं।

उनकी बात सुनकर लड़का पानी-पानी हो गया। उस्मान उसे अपनी कुटिया में ले गये। स्नान करवाया और दूसरे कपड़े पहनने को दिये। फिर ऊपर को निगाह उठाकर बोले, "या खुदा, मुझसे जैसा बन पड़ा, मैंने किया। बाकी का काम तो मुझे करना होगा।"

कहना न होगा कि उस्मान के बर्ताव से उस लड़के के हृदय में भक्ति-भाव पैदा हुआ और उसका जीवन बदल गया।

... ...

एक आदमी ने एक दिन उनसे पूछा, "महात्मन्, मेरी जीभ तो भगवान का जप करती है, पर मन उस ओर नहीं लगता। मैं क्या करूं?"

उस्मान ने जवाब दिया, "भाई, एक इंद्रिय वश में आ गई, इसीसे खुश होना चाहिए। एक अंग ने अच्छा रास्ता पकड़ा है, तो एक दिन मन भी ठीक रास्ते पर आवेगा ही।"

... ...

एक दिन एक युवक मक्का की यात्रा करके उस्मान से मिलने आया। उसने उन्हें सलाम किया, लेकिन उस्मान ने उसे मंजूर न किया। इसपर वह युवक बड़-बड़ाने लगा। बोला, "एक मुसलमान दूसरे मुसलमान

का सलाम मंजूर न करे यह तो बड़ा अन्याय है ।"

उस्मान ने जवाब दिया, "भाई, तुमने अपनी माता को दुखित अवस्था में छोड़कर यात्रा की है, इसलिए यह तुम्हें फलेगी नहीं ।"

यह सुनकर युवक बड़ा पछताया और फौरन लौटकर अपनी माता की सेवा में जुट गया। कुछ दिन बाद मां की मृत्यु होने पर जब वह उस्मान के पास आया तो उन्होंने उसे बड़े प्यार से अपने पास रख लिया और युवक के मांगने पर उसे अपने जानवर चराने का काम सौंप दिया । वह युवक आगे चलकर उनका खास शिष्य हुआ ।

: ४ :

इब्राहीम आदम

इब्राहीम आदम पहले राजा थे, बाद में सबकुछ छोड़कर फकीर हो गये। जब वह बलख के राजा थे तब उन्होंने एक दिन रात में सोते समय महल में किसीके पैरों की आहट सुनी । वह इतनी तेज थी कि सारी छत हिलने लगी । चौंककर पूछा, "कौन है ?"

आनेवाले ने कहा, "डरो मत । मैं तुम्हारा दुश्मन नहीं, दोस्त हूं । मेरा ऊंट खो गया है, उसीको खोजने आया हूं ।"

इब्राहीम बोले, "इतने ऊंचे महल में ऊंट कहां से

आवेगा ?"

आनेवाले ने कहा, "अरे, नासमझ तू भी इतने ऊंचे राज-महल में सोने के सिंहासन पर बैठकर ईश्वर को खोजना चाहता है । मेरी बात से तुझे क्यों अचरज हुआ ?"

इतना कहकर वह आदमी गायब हो गया । उसकी बातों का इब्राहीम के मन पर बहुत असर पड़ा । उनके मन में अशांति पैदा हो गई ।

इतने में ही एक और घटना घटी । एक दिन वह अपने कर्मचारियों के साथ राजकाज संभाल रहे थे कि एक आदमी वहां आया । इब्राहीम ने उससे पूछा, "आप क्या चाहते हैं ?"

उस आदमी ने जवाब दिया, "और कुछ नहीं, सिर्फ एक दिन इस मुसाफिरखाने में रहना चाहता हूं ।"

"यह मुसाफिरखाना नहीं, राजभवन है ।"

"तुमसे पहले इस मकान में कौन रहता था ?"

"मेरे पिता ।"

"उनसे पहले ?"

"मेरे दादा ।"

"उनसे पहले ?"

"उनके पिता ।"

"जब इस मकान में नये-नये आते और पुराने-पुराने जाते रहे हैं, तो ये मुसाफिरखाना नहीं तो क्या है ?"

अब तो इब्राहीम के दिल में वैराग्य की आग तेज होगई। दुनिया में उन्हें चैन नहीं था। एक दिन अपने नौकर को साथ लेकर घोड़े पर सवार हो वह जंगल की ओर चल दिये। वहां पहुंचकर वह भटक गये। नौकर बिछुड़ गया। इतने में ही अचानक आवाज आई—जागृत हो। इब्राहीम ने इधर-उधर देखा, पर कोई दिखाई न दिया। दो बार फिर उन्हें वही आवाज सुनाई दी। इब्राहीम चकित होकर देखने लगे। चौथी बार उन्हें सुनाई दिया—मौत आकर तुझे जगावे उससे पहले ही जाग जा।

उन्होंने राजा की पोशाक छोड़ दी और मामूली कपड़े पहनकर इधर-उधर घूमने लगे। फिर एक गुफा में जाकर नौ बरस रहे। इस अरसे में उन्होंने अपनी बुराइयों को जीता।

चौदह साल तक बहुत-से स्थानों और जंगलों में घूमने के बाद वह मक्का गये। उनके आने का समाचार सुनकर मक्का के रहनेवालों ने उनके स्वागत की तैया-तैयारियां कीं। जब इब्राहीम को इसकी खबर मिली तो वह व्यापारियों के काफिले के साथ इस तरह मिल-कर मक्का पहुंचे कि कोई भी उन्हें पहचान न सका।

एक आदमी खोजता हुआ उसी काफिले में आया और संयोग की बात कि उसने स्वयं इब्राहीम से पूछा, "क्या आपने तपस्वी इब्राहीम को देखा है? मक्का के

लोग उनका स्वागत करना चाहते हैं।"

इब्राहीम ने कहा, "उस पाखंडी इब्राहीम से तुम्हें क्या काम ? उससे तुम्हें क्या फायदा होगा ?"

यह सुनकर वह आदमी आग-बबूला हो उठा, इब्राहीम को खरी-खोटी सुनाते हुए बोला, "उस महा-पुरुष को पाखण्डी बतानेवाला तू खुद कोई पाखण्डी दिखाई देता है।"

"हां भाई, मैं जरूर ही पाखंडी हूं," उन्होंने शांति से उत्तर दिया, फिर अपने मन को इशारा करते हुए बोले, "रे दुष्ट मन, तुझे आज ठीक ही सजा मिली है।" वह भगवान को धन्यवाद देने लगे। यह हाल देखकर वह आदमी ताड़ गया कि हो-न-हो, यही वह तपस्वी हैं। वह रोकर उसके पैरों पर पड़ गया और बार-बार माफी मांगने लगा। इब्राहीम ने हँसकर कहा, "तुमने तो ठीक ही कहा था, भाई। मैं खुद जानता हूं कि मेरा मन कितना पाखंडी है !"

... ...

मक्का में रहकर उन्होंने बहुत-से तपस्वियों का साथ किया। अपनी मेहनत से ही वहां भी वह पेट भरते थे। जंगल से लकड़ियां या साग-भाजी ले आते और उन्हें बेचकर अपना काम चलाते। राजपाट छोड़ते समय उनका एक छोटा-सा लड़का था। बड़ा होने पर वह भी अपने मां के साथ मक्का की यात्रा करने के लिए

आया। इब्राहीम का नियम था कि वह सबेरे ही जंगल में चले जाते और शाम होने पर मक्का लौटते, लकड़ियां बेचते, खुराक खरीदते, गरीबों को भीख देते, शाम की नमाज पढ़ते, फिर खुद खाते। कई बार आटा खरीद-कर रोटी बनाते, गरीबों को खिलाते और खुद खाते।

मक्का में आने पर एक दिन बेटे ने देखा कि पिता सिर पर लकड़ियों का बोझ लिये आ रहे हैं। यह देख-कर वह दुखी होकर रोने लगा। अपने मालिक की ऐसी हालत देखकर उसकी बीवी भी रोने लगी। काबा के पास ही बाप-बेटे का मिलाप हुआ था। इब्राहीम बड़े प्यार से अपने बेटे से मिले। बेटा भी वहीं रहने लगा। कुछ दिन बाद वह चल बसा।

एक रात को इब्राहीम का एक साथी बहुत बीमार हो गया। सर्दी की रात। बोटी-बोटी कांप रही थी। घास-फूंस के झोंपड़े के दरवाजे में किवाड़ें भी नहीं थीं। रोगी को सर्दी से बचाने के लिए इब्राहीम रातभर दर-वाजे को रोककर खड़े रहे।

...　　...　　...

एक आदमी ने बताया, "एक बार मैं इब्राहीम के साथ सफर कर रहा था। रास्ते में मैं बहुत ही बीमार हो गया। अपना सबकुछ बेचकर उन्होंने मेरी सेवा की। जब अपने पास कुछ न बचा तो मेरा खच्चर बेच दिया। होश आने पर जब मैंने खच्चर बिक जाने से इस बात

पर दुख प्रकट किया कि अब रास्ता कैसे कटेगा तो उन्होंने कहा, "मेरे कंधे पर बैठकर चलना। उन्होंने मुझे तीन दिन तक अपने कंधे पर बिठाकर आगे का सफ़र किया।"

... ...

इब्राहीम जंगल में अकेले रहते थे। एक दिन उन्हें खाना न मिला। वह ईश्वर को धन्यवाद देकर रातभर ध्यान में लगे रहे। अगले दिन भी ऐसा ही हुआ। इस तरह सात दिन और बीत गये। भूख से उनकी देह बहुत कमजोर हो गई, तो वह बोले, "हे प्रभो, अब कुछ खाना मिल जाय तो..."

"तीन दिन तक मुझे कंधे पर बिठा कर उन्होंने सफर किया।"

इतना कहते ही एक लड़का वहां आया और बड़ी इज्जत से उन्हें अपने घर ले गया। उसे यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि वह तपस्वी इब्राहीम हैं। मगन होकर उसने कहा, "आपके आने से मैं धन्य हो गया। मेरा सारा धन आपके चरणों में है। मैं आपका किंकर होकर रहूंगा।"

इब्राहीम बोले, "तुमनें मुझे जो देने का विचार किया है, उसे मैं तुम्हें वापस करता हूं। मुझे अब छुट्टी दो, मैं अपनी जगह लौट जाऊं।"

इतना कहकर वह वहां से लौट पड़े। रास्ते में आसमान की ओर देखकर उन्होंने कहा, "हे परवरदिगार! मेरी तो बस इतनी ही इच्छा है कि खाने को कुछ मिल जाय। मुझे तो रोटी चाहिए। इतने धन का लालच क्यों देते हो ?"

... ...

एक बार एक पैसेवाले ने हजार अशर्फी की थैली उनके पास लाकर उसे मंजूर करने को कहा। उन्होंने जवाब दिया, "मैं गरीब की एक पाई भी नहीं लेना चाहता।

पैसेवाले नें कहा, "मैं तो गरीब नहीं हूं, धनवान हूं।"

"पर तुम्हें तो अभी और धन की लालसा बनी हुई है न ?"

"जीहां।"

"धनी होते हुए भी जिसकी धन की इच्छा दूर नहीं हुई है, उसे मैं सबसे ज्यादा गरीब मानता हूं ।"

. . . .

एक बार वह सड़क पर चले जा रहे थे। उन्हें देखकर चौकीदार ने पूछा, "तुम कौन हो ?"

"गुलाम ।"

"कहां रहता है ?"

"कब्रिस्तान में ।"

इस जवाब को अपना मज़ाक समझकर उस सिपाही ने उनके दो-चार कोड़े जमा दिये; लेकिन बाद में उसे जब यह मालूम हुआ कि वह इब्राहीम हैं तो उनके पैरों पर सिर टेककर माफ़ी मांगने लगा ।

इब्राहीम ने कहा, "तुमने जो काम किया उससे मुझे फायदा ही होगा । मैं तो तुम्हारे भले के लिए ही कामना करूंगा ।"

अपनी बात को समझाते हुए उन्होंने कहा, "भाई सारे लोग भगवान के दास हैं। मैं भी उसीका दास हूं। उन सब गुलामों का आखिरी घर तो एक कब्रिस्तान ही है। इसमें मैंने झूठ क्या कहा ?"

एक फकीर को अपनी गरीबी और फकीरी पर अफसोस करते हुए देखकर उन्होंने कहा, "क्यों भाई, फकीरी तुम्हें मुफ्त में मिल गई है क्या ?"

वह बोला, "तो फकीरी भी कहीं मोल बिकती है ?"

"जी हां, मैंने तो बलख का राज देकर ली है।"

: ५ :

राबिया

तुर्किस्तान के बसरा नगर में किसी ग़रीब के घर राबिया का जन्म हुआ था। अरबी भाषा में 'राबा' का मतलब है चौथा। इससे मालूम होता है कि वह चौथी पुत्री थीं। उनके बड़े होते ही देश में अकाल पड़ा और उनके माता-पिता का देहांत हो गया। इससे उनका अपनी बहनों से भी बिछोह होगया। एक नीच आदमी ने राबिया को किसी धनवान के हाथ बेच दिया। वह राबिया से खूब काम लेता और वह काम न कर पाती तो उसे मारता। दुखी होकर राबिया एक दिन वहां से निकल भागीं। भागते-भागते वह रास्ते में गिर पड़ीं और उनका हाथ टूट गया।

इतने पर भी उन्हें एक दूसरे सेठ के यहां नौकरी करनी पड़ी। दिन में मालिक की चाकरी करतीं और रात को धर्म-ग्रंथ पढ़तीं, उपासना करतीं। इस बात को कई दिन बीत गये। एक दिन सेठ ने रात को उठकर देखा, राबिया अपनी कोठरी में बैठी ध्यान कर रही हैं। बाद में उन्होंने प्रार्थना की––

"हे प्रभु, तू सबकुछ जानता है। तुझसे कुछ भी छिपा नहीं है। मैं हमेशा तेरा ही हुकुम बजाती रही

हूं। आगे भी तेरे हुकुम का पालन करते-करते ही मरूं, ऐसी मेरी इच्छा है। तेरी ही सेवा में रात-दिन बीतें, यह मैं चाहती हूं। पर करूं क्या ? तूने मुझे दूसरे की दासी बनाया है। इसलिए मैं अपना सारा समय तेरी उपासना के लिए नहीं दे सकती। हे प्रभु, इसके लिए मुझे क्षमा कर।"

राबिया की ऐसी प्रार्थना सुनकर उस सेठ पर गहरा असर पड़ा। उसने राबिया के मुंह पर बड़ा तेज देखा। 'ऐसी पाक स्त्री की सेवा तो मुझे करनी चाहिए', ऐसा विचार उसके मन में उठा। दूसरे ही दिन उसने राबिया को गुलामी से मुक्त कर दिया और कहा, "आप मेरे घर में रहेंगी तो मैं आपकी सेवा करूंगा। आप किसी दूसरी जगह जाना चाहें तो आपकी इच्छा !"

राबिया ने उससे विदा ले ली। उसके बाद उन्होंने बड़ी कठोर तपस्या का जीवन बिताया। रात-दिन धर्म-ग्रंथ पढ़तीं और ईश्वर की उपासना में लीन रहतीं। अपने जीवन का शेष भाग उन्होंने मक्का में बिताया। वह हमेशा कुमारी रहीं। कहते हैं, वह आज से बारह सौ साल पहले हुई थीं। उन्होंने अपना जीवन ऐसा बना लिया था कि उनके दर्शन करने तथा उनके उपदेश सुनने के लिए लोगों की भीड़ लगी रहती थी।

... ...

बसरा में हुसेन नाम के एक महर्षि रहते थे। एक बार उन्होंने राबिया से पूछा, "तुम्हारी इच्छा ब्याह करने की है ?"

राबिया ने जवाब दिया, "विवाह तो होता है शरीर का। मेरे पास शरीर कहां ? यह शरीर तो मैं ईश्वर को सौंप चुकी हूं। अब तो यह उसीके आधीन है। उसीके काम में लगा है। कहो, मैं अब कौन-से शरीर का विवाह करूं।

एक बार हुसेन ने पूछा, "तुमने यह ऊंची जगह कैसे पाई ?"

"मुझे जो चीजें मिली थीं, उन सबको खोकर।"

"ईश्वर को कैसा समझती हो ?"

"वह कैसे हैं, यह तो आप भी जानते हैं। मैं तो उन्हें अरूप, अमाप मानती ।"

... ...

किसी आदमी ने राबिया से पूछा, "पापरूपी राक्षस को आप दुश्मन समझती हैं न ?"

राबिया ने जवाब दिया, "ईश्वर के प्रेम में मगन रहने के कारण न मुझे उससे कोई दुश्मनी करनी पड़ती है, न लड़ाई।"

... ...

एक बार एक आदमी माथे पर पट्टा बांधकर उनके पास आया। उसका सिर दर्द कर रहा था।

राबिया ने उससे पूछा, "कितने साल के हो गये ?"

"तीस साल का।"

"अबतक तंदुरुस्त थे या बीमार ?"

"तंदुरुस्त।"

"इतने साल तक तो कृतज्ञता प्रकट करने के लिए तुमने माथे पर कुछ नहीं बांधा, आज जरा बीमार होते ही शोक की निशानी में यह पट्टा बांध लिया !"

... ...

एक बार दो फकीर राबिया के दर्शन के लिए आये। वे भूखे थे। आपस में बात करने लगे कि अगर कुछ खाने को मिल जाय तो खा लें।

राबिया के पास सिर्फ दो रोटियां थीं, उन्हें वह ले आईं; पर इतने में ही एक तीसरा फकीर आकर रोटी मांगने लगा। राबिया ने वे दोनों रोटियां उसे दे दीं। यह देखकर उन दो फकीरों को बड़ा अचरज हुआ। तभी एक दासी रोटियां लेकर आई और राबिया से बोली, "मेरी मालकिन ने ये रोटियां आपके लिए भेजी हैं।"

राबिया ने गिनीं तो अठारह निकलीं। उन्होंने उस दासी को बिना रोटियां लिये लौटा दिया।

बाद में वह फिर आई। राबिया ने रोटियां गिनीं तो बीस निकलीं। उन्होंने उन्हें लिया और फकीरों को दे दिया। खाना खाते-खाते फकीरों ने भेद पूछा

तो उन्होंने कहा, "आप दोनों भूखे हैं, यह मैं जान गई थी। मेरे पास दो ही रोटियां थीं। उनसे आप दोनों का पेट न भरता। इसलिए मैंने उन्हें उस तीसरे फकीर को दे दिया। इसके बाद मैंने प्रभु से प्रार्थना की, "हे प्रभु, तुमने कहा था कि मैं दान से दसगुना वापस देता हूं, इस बात पर मेरी श्रद्धा है। आपके संतोष के लिए मैंने अभी दोनों रोटियां दान में दे दीं। अठारह रोटियों को देखकर मुझे लगा कि भेजने में भूल हुई है। बाद में बीस आई हैं तो हिसाब से दस गुनी हो गई और मैंने उन्हें ले लिया।"

... ...

एक दिन राबिया बीमार हो गईं तो दो जने उनकी तबीयत का हाल पूछने आये। एक ने कहा, "आप प्रार्थना करें। प्रभु आपको जरूर तंदुरुस्त करेगा।"

राबिया ने उसकी ओर देखकर कहा, "तुम नहीं जानते, किसी इच्छा से रोग पैदा होता है। मेरे इस रोग में क्या उस प्रभु का हाथ नहीं है?"

"हां, उसकी इच्छा तो होगी ही।"

"इतना मालूम होते हुए भी क्यों कहते हो कि मैं उसकी इच्छा के खिलाफ प्रार्थना करूं? जो अपना बहुत ही दोस्त है, उसकी इच्छा के खिलाफ बर्त्ताव करना क्या एक स्नेही के लिए वाजिब है?"

: ६ :

अब्दुल्ला खफ़ीफ़ पारसी

तपस्वी अब्दुल्ला ईश्वर के परम भक्त थे। वह पारस के रहनेवाले थे। बड़े ही धर्मात्मा। सभी धर्म-साधक उनके उपदेश सुना करते थे। 'खफ़ीफ़' का मत-लब है छोटा। अब्दुल्ला कद में बहुत छोटे थे। इसी-लिए उनका नाम खफ़ीफ़ पड़ गया था। दिनभर में वह सिर्फ सात ग्रास का भोजन करते थे। एक रात को उनके नौकर ने भूल से उन्हें आठ ग्रास दे दिये। नतीजा यह हुआ कि वह रात चैन से ईश्वर की आराधना में नहीं बिता सके। दूसरे दिन उन्होंने नौकर से पूछा तो उसने आठ ग्रास की बात बता दी। अब्दुल्ला ने कहा, "ऐसा तुमने क्यों किया ?"

वह बोला, "आपके कमजोर शरीर को देखकर मुझे बहुत दुख होता है। आपमें थोड़ी ताकत आवे, इसलिए मैंने ऐसा किया था।

यह सुनकर अब्दुल्ला ने कहा, "तू मेरा भला चाहनेवाला नौकर होता, तो मुझे सात के बदले छः ग्रास देता !"

उन्होंने उस नौकर की जगह दूसरा रख लिया। वह हमेशा कठोर साधना में लगे रहते थे।

... ...

अहमद और अहमदमाह नाम के उनके दो शिष्य थे। अहमद के लिए उनके मन में अधिक प्रेम था यह बात अहमदमाह को खटकती थी। एक दिन अब्दुल्ला ने अहमद को बुलाकर कहा, "जाओ, घर के बाहर जो ऊंट बैठा है उसे सामने की भीत पर खड़ा कर दो।"

उसने कहा, "बहुत ठीक है" और वह बाहर जाकर ऊंट को दीवार पर चढ़ाने की कोशिश करने लगा।

उसके बाद अब्दुल्ला ने अहमदमाह को बुलाकर उससे भी वही बात कही। वह तर्क करने लगा—"गुरुवर, ऊंट भीत पर किस तरह चढ़ सकता है?"

अब्दुल्ला ने दोनों शिष्यों को बुलाया और उन्हें सुनाकर कहा, "अहमद के मन का भाव मैं समझ गया। उसने अपने फर्ज का पालन किया। जो कहा गया उसनें मुंह नहीं मोड़ा। कामयाबी मिलेगी या नहीं, इसका ध्यान रखे बिना वह जुट गया, लेकिन अहमदमाह तो मेरे हुक्म को शंका की निगाह से देखता है। उसके बाहरी आचरण से उसके मन का भाव साफ दिखाई देता है।

... ...

एक दिन दो सूफी अब्दुल्ला खफ़ीफ़ ने दर्शन करने के लिए दूर देश से आये। अब्दुल्ला इस समय अपनी कुटिया में नहीं थे। पूछने पर मालूम हुआ कि वह बादशाह के यहां गये हुए हैं। दोनों सूफी आपस में बात

करने लगे कि तपस्वी को राजा से क्या सरोकार ? इस विचार से उनके मन में तपस्वी अब्दुल्ला के लिए थोड़ी अश्रद्धा पैदा हुई। वे शहर में घूमने के लिए चले गये। बाजार में जाने पर उनमें से एक को अपनी फटी कफनी सिलवानी थी, इसलिए दोनों दर्जी के पास गये। संयोग से उसी समय उस दर्जी की अंगूठी गिरकर खो गई थी। उसने समझा कि दोनों सूफी ही चोर हैं। इसलिए उन्हें बादशाह की अदालत में ले गया। अदालत के अधिकारी ने दोनों के हाथ कटवा देने का हुक्म दिया। उसी समय खफ़ीफ़ उधर से निकले। उन्होंने कहा, "उन दोनों का कोई कसूर नहीं है।" और उन्हें छुड़वा दिया। इसके बाद वह उन्हें इज्जत के साथ अपनी झोंपड़ी की ओर लेकर चले। रास्ते में उन दोनों से बोले, "आप लोगों ने जो सोचा कि तपस्वी होकर मैं बादशाह के यहां क्यों जाता हूं, वह ठीक है। लेकिन बात असल में यह है कि किसी मामले में अन्याय न हो जाय, इसलिए मैं बादशाह के पास जाया करता हूं।"

यह सुनकर दोनों सूफी शरमा गये और हमेशा के लिए उनके शिष्य बन गये।

... ...

एक दिन एक मेहमान उनके घर आया। रात को उसको उल्टी होने लगी। बार-बार उल्टी होने से वह बहुत ही कमजोर हो गया। रातभर अब्दुल्ला उल्टी साफ करते

रहे। कोई पचास बार सफाई की होगी। बाद में उन्हें नींद आ गई। अतिथि को फिर उल्टी होने लगी। उसने चिल्लाकर कहा, "अरे मूर्ख, तू कहां चला गया। जल्दी आ।"

उसकी आवाज सुनकर अब्दुल्ला नींद से चौंके और झटपट बर्तन हाथ में लेकर उसकी तरफ दौड़े। इसपर उनके शिष्यों ने पूछा, "गुरुवर ऐसी कड़वी बात बोलनेवाले की भी आप इतनी सेवा करते हैं। बड़े अचरज की बात है कि ऐसे बेहूदे शब्द सुनकर भी आप धीरज रखते हैं।"

अब्दुल्ला ने जवाब दिया, "चुप रहो, मैंने भी उसकी बोली सुनी है। पर इससे क्या हुआ। उसका स्वभाव कैसा ही हो, हमें अपना फर्ज अदा करते रहना चाहिए।

समाज विकास - माला की पुस्तकें

छः आना